IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429
Volume 6, Issue 5, July 2026
Impact Factor: 8.2

भारतीय ऐतिहासिक लेखन में साम्प्रदायिक प्रवृत्तियों का उद्भव, विकास और प्रभाव

अभय कुमार[1] and डॉ. जयवीर सिंह[2]
[1]शोधार्थी, इतिहास-विभाग
[2]प्रोफेसर, इतिहास-विभाग
विक्रांत विश्वविद्यालय, ग्वालियर, म.प्र., भारत

सारांश: भारतीय इतिहास-लेखन की परंपरा अत्यंत समृद्ध, बहुआयामी और विविध सामाजिक-सांस्कृतिक अनुभवों से निर्मित रही है। तथापि, आधुनिक काल में इतिहास-लेखन के क्षेत्र में साम्प्रदायिक प्रवृत्तियों का विकास एक महत्वपूर्ण बौद्धिक और राजनीतिक घटना के रूप में सामने आया। साम्प्रदायिक इतिहास-लेखन में अतीत की घटनाओं, शासकों, धार्मिक समुदायों तथा सामाजिक संबंधों की व्याख्या प्रायः धार्मिक पहचान के आधार पर की जाती है।

भारत में इस प्रवृत्ति के विकास को औपनिवेशिक शासन, प्रशासनिक वर्गीकरण, जनगणना, राजनीतिक प्रतिस्पर्धा, धार्मिक पुनरुत्थान आंदोलनों और राष्ट्रवादी राजनीति के संदर्भ में समझा जा सकता है। औपनिवेशिक इतिहासकारों द्वारा भारतीय अतीत को प्राचीन हिन्दू, मध्यकालीन मुस्लिम और आधुनिक ब्रिटिश काल जैसी सरल विभाजित संरचना में प्रस्तुत करने से इतिहास की साम्प्रदायिक व्याख्या को आधार मिला। बाद में विभिन्न राजनीतिक और सामाजिक संगठनों ने ऐतिहासिक घटनाओं को अपनी वैचारिक आवश्यकताओं के अनुसार प्रस्तुत किया।

मुख्य शब्द:- भारतीय इतिहास-लेखन, साम्प्रदायिकता, औपनिवेशिक इतिहास, राष्ट्रवाद, इतिहास-बोध, धार्मिक पहचान, इतिहास की व्याख्या ।

I. परिचय

इतिहास केवल अतीत की घटनाओं का क्रमबद्ध विवरण नहीं है, बल्कि यह इस बात को भी निर्धारित करता है कि कोई समाज अपने अतीत को किस प्रकार समझता और वर्तमान से जोड़ता है। इसलिए इतिहास-लेखन में इतिहासकार की विचारधारा, स्रोतों का चयन, सामाजिक दृष्टिकोण और राजनीतिक परिस्थितियाँ महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। भारतीय संदर्भ में इतिहास-लेखन ने प्राचीन ग्रंथों, अभिलेखों, यात्रावृत्तांतों, साहित्यिक स्रोतों, पुरातात्त्विक प्रमाणों और प्रशासनिक दस्तावेजों के माध्यम से व्यापक रूप ग्रहण किया। आधुनिक काल में जब इतिहास को व्यवस्थित अकादमिक अनुशासन के रूप में विकसित किया गया, तब विभिन्न औपनिवेशिक और राष्ट्रवादी दृष्टिकोणों ने भारतीय अतीत की व्याख्या को प्रभावित किया। इसी प्रक्रिया में साम्प्रदायिक दृष्टिकोण का उदय हुआ। साम्प्रदायिक इतिहास-लेखन किसी विशेष धार्मिक समुदाय को इतिहास की केंद्रीय इकाई मानकर दूसरे समुदाय को उसके विरोधी या बाहरी तत्व के रूप में प्रस्तुत करने की प्रवृत्ति विकसित कर सकता है। ऐसी दृष्टि इतिहास की जटिल सामाजिक वास्तविकताओं को सरल धार्मिक द्वंद्व में बदल देती है। भारतीय इतिहास में राजनीतिक संघर्षों, सत्ता-परिवर्तनों और सामाजिक तनावों को केवल हिन्दू-मुस्लिम संघर्ष के रूप में देखना इसी समस्या का प्रमुख उदाहरण है।

II. भारतीय इतिहास-लेखन की पृष्ठभूमि

भारतीय इतिहास-लेखन की प्रारंभिक परंपराओं में आधुनिक अर्थों में इतिहास की निरंतर और वैज्ञानिक अवधारणा हमेशा मौजूद नहीं थी, लेकिन पुराणों, वंशावलियों, राजतरंगिणी, शिलालेखों, धार्मिक ग्रंथों, दरबारी विवरणों और यात्रियों के वृत्तांतों में अतीत संबंधी महत्वपूर्ण सामग्री मिलती है। मध्यकाल में विभिन्न दरबारी इतिहासकारों ने राजनीतिक घटनाओं, राजाओं और युद्धों का वर्णन किया। इन विवरणों में उनके संरक्षक शासकों और तत्कालीन राजनीतिक-सामाजिक परिस्थितियों का प्रभाव दिखाई देता है। आधुनिक इतिहास-लेखन का संस्थागत विकास औपनिवेशिक काल में हुआ। यूरोपीय विद्वानों ने भारतीय भाषाओं, धर्मों, कानूनों और अतीत

DOI: 10.48175/568

IJARSCT

International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology

International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal

ISSN: 2581-9429 Volume 6, Issue 5, July 2026 Impact Factor: 8.2

का अध्ययन किया, परंतु कई औपनिवेशिक इतिहासकारों ने भारतीय समाज को स्थिर, विभाजित और धार्मिक समुदायों में बँटा हुआ प्रस्तुत किया। इस दृष्टिकोण ने भारतीय इतिहास की ऐसी संरचना तैयार की जिसमें धार्मिक पहचान राजनीतिक और सामाजिक परिवर्तन की प्रमुख व्याख्यात्मक इकाई बन गई। आगे चलकर यही प्रवृत्ति साम्प्रदायिक इतिहास-लेखन के लिए एक वैचारिक आधार बनी।

III. साम्प्रदायिक इतिहास-लेखन का उद्भव

भारतीय इतिहास में साम्प्रदायिक प्रवृत्तियों के उद्भव को उन्नीसवीं शताब्दी के औपनिवेशिक ज्ञान-निर्माण से जोड़कर देखा जाता है। औपनिवेशिक प्रशासन ने भारतीय समाज को धार्मिक, जातीय और सामाजिक श्रेणियों में वर्गीकृत किया। जनगणना, प्रशासनिक रिपोर्टों और आधिकारिक दस्तावेजों में समुदायों की पहचान को व्यवस्थित रूप से दर्ज किया जाने लगा। इतिहास-लेखन में भी धार्मिक विभाजन पर विशेष ध्यान दिया गया। कुछ औपनिवेशिक इतिहासकारों ने भारतीय इतिहास को हिन्दू और मुस्लिम शासन के अलग-अलग चरणों में विभाजित करके देखा तथा ब्रिटिश शासन को इन दोनों समुदायों के बीच मध्यस्थ या स्थिरकारी शक्ति के रूप में प्रस्तुत किया। ऐसी व्याख्या ने यह धारणा मजबूत की कि भारतीय समाज प्राचीन काल से ही धार्मिक संघर्षों से विभाजित था। वास्तव में राजनीतिक सत्ता, आर्थिक हित, क्षेत्रीय परिस्थितियाँ, सामाजिक संरचनाएँ और स्थानीय संबंध ऐतिहासिक परिवर्तनों में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते थे, जिन्हें केवल धार्मिक संघर्ष के आधार पर समझना इतिहास की जटिलता को सीमित करता है।

IV. औपनिवेशिक इतिहास-लेखन और साम्प्रदायिक दृष्टिकोण

औपनिवेशिक इतिहास-लेखन ने भारतीय अतीत की व्याख्या में यूरोपीय मानकों और औपनिवेशिक राजनीतिक हितों को प्रमुखता दी। भारतीय इतिहास को प्रायः प्राचीन, मध्यकालीन और आधुनिक काल में बाँटते हुए मध्यकाल को मुस्लिम शासन से जोड़ दिया गया। इससे यह धारणा विकसित हुई कि प्राचीन भारत मुख्यतः हिन्दू था, मध्यकाल मुस्लिम था और आधुनिक भारत ब्रिटिश शासन के कारण विकसित हुआ। इस प्रकार की काल-विभाजन पद्धति ने धार्मिक पहचान को राजनीतिक इतिहास का केंद्रीय आधार बना दिया। औपनिवेशिक शासन की 'फूट डालो और शासन करो' जैसी नीतियों ने भी सामुदायिक पहचान की राजनीतिक उपयोगिता को बढ़ाया। हालांकि यह कहना उचित नहीं होगा कि साम्प्रदायिकता का संपूर्ण निर्माण केवल औपनिवेशिक इतिहासकारों द्वारा किया गया; भारतीय सामाजिक-राजनीतिक परिस्थितियों और विभिन्न समुदायों के बीच उभरती प्रतिस्पर्धाओं ने भी इसमें योगदान दिया। फिर भी औपनिवेशिक ज्ञान-व्यवस्था ने धार्मिक वर्गीकरणों को प्रशासनिक और बौद्धिक वैधता प्रदान की, जिससे बाद के साम्प्रदायिक इतिहास-लेखन को महत्वपूर्ण आधार प्राप्त हुआ।

V. राष्ट्रवादी इतिहास-लेखन और उसकी प्रतिक्रिया

औपनिवेशिक इतिहास-लेखन की प्रतिक्रिया में राष्ट्रवादी इतिहास-लेखन का विकास हुआ। भारतीय इतिहासकारों ने औपनिवेशिक धारणाओं को चुनौती देते हुए भारतीय सभ्यता की उपलब्धियों, सांस्कृतिक निरंतरता और राजनीतिक परंपराओं को सामने रखा। राष्ट्रवादी इतिहास-लेखन ने भारतीयों में आत्मसम्मान और राष्ट्रीय चेतना विकसित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। हालांकि राष्ट्रवादी इतिहास-लेखन एक समान नहीं था। इसके कुछ रूप समावेशी थे, जिनमें भारत की विविध धार्मिक और सांस्कृतिक परंपराओं को राष्ट्रीय विरासत का हिस्सा माना गया; जबकि कुछ प्रवृत्तियों ने अतीत के गौरव को मुख्यतः किसी एक धार्मिक या सांस्कृतिक समुदाय से जोड़ने का प्रयास किया। इस प्रकार राष्ट्रवाद और साम्प्रदायिकता के बीच एक जटिल संबंध विकसित हुआ। एक ओर राष्ट्रवादी इतिहास ने औपनिवेशिक प्रभुत्व का विरोध किया, दूसरी ओर कुछ इतिहास-विवेचनाओं में चयनात्मक अतीत और धार्मिक प्रतीकों के अत्यधिक प्रयोग ने साम्प्रदायिक ध्रुवीकरण को भी बढ़ावा दिया।

VI. साम्प्रदायिक इतिहास-लेखन का विकास

बीसवीं शताब्दी में साम्प्रदायिक राजनीति के विस्तार के साथ इतिहास की व्याख्या भी राजनीतिक संघर्ष का हिस्सा बनने लगी। अलग-अलग समुदायों के नेताओं और संगठनों ने अपने ऐतिहासिक अनुभवों को राजनीतिक पहचान के निर्माण के लिए उपयोग किया। मध्यकालीन शासकों, मंदिरों, मस्जिदों, धार्मिक संघर्षों और सामाजिक संबंधों से संबंधित घटनाएँ राजनीतिक बहस का विषय

ISSN: 2581-9429 Volume 6, Issue 5, July 2026 Impact Factor: 8.2

बनने लगीं। इतिहास की चयनात्मक व्याख्या में ऐसे प्रसंगों को अधिक महत्व दिया गया जो किसी समुदाय की पीड़ित, विजेता या प्रतिरोधकर्ता की पहचान को मजबूत करते थे। इसके परिणामस्वरूप साझा सामाजिक जीवन, सांस्कृतिक आदान-प्रदान, भाषायी मिश्रण, व्यापारिक संबंध और स्थानीय सहयोग जैसी प्रक्रियाएँ अपेक्षाकृत कम दिखाई देने लगीं। विभाजन के दौर में साम्प्रदायिक इतिहास-बोध ने सामाजिक संबंधों पर गंभीर प्रभाव डाला और ऐतिहासिक स्मृतियाँ राजनीतिक पहचान के निर्माण में महत्वपूर्ण साधन बन गईं।

VII. स्वतंत्रता के बाद इतिहास-लेखन

स्वतंत्रता के बाद भारतीय इतिहास-लेखन में वैज्ञानिक, धर्मनिरपेक्ष और सामाजिक इतिहास की दिशा में महत्वपूर्ण विकास हुआ। इतिहासकारों ने आर्थिक संरचनाओं, वर्ग संबंधों, जाति, ग्रामीण समाज, श्रम, महिलाओं, जनजातीय समुदायों और सामान्य जनता के अनुभवों को अध्ययन का हिस्सा बनाया। इस दृष्टिकोण ने इतिहास को केवल राजाओं और धार्मिक संघर्षों के इतिहास से आगे बढ़ाकर सामाजिक परिवर्तन के व्यापक अध्ययन में परिवर्तित किया। फिर भी इतिहास-लेखन पूरी तरह वैचारिक विवादों से मुक्त नहीं हुआ। इतिहास की पाठ्यपुस्तकों में किन घटनाओं को शामिल किया जाए, किन शासकों को किस रूप में प्रस्तुत किया जाए और धार्मिक संघर्षों की व्याख्या कैसे की जाए ये प्रश्न समय-समय पर राजनीतिक बहस का विषय बने। इस संदर्भ में इतिहास-लेखन की निष्पक्षता, स्रोतों की आलोचनात्मक जाँच और बहु-दृष्टिकोण की आवश्यकता और अधिक महत्वपूर्ण हो जाती है।

VIII. साम्प्रदायिक प्रवृत्तियों की प्रमुख विशेषताएँ

साम्प्रदायिक इतिहास-लेखन की प्रमुख विशेषताओं में इतिहास को धार्मिक समुदायों के संघर्ष के रूप में प्रस्तुत करना, चयनात्मक स्रोतों का उपयोग, किसी विशेष समुदाय के योगदान को अत्यधिक महिमामंडित करना, दूसरे समुदाय की भूमिका को नकारात्मक रूप में प्रस्तुत करना तथा जटिल राजनीतिक घटनाओं को धार्मिक संघर्ष तक सीमित करना शामिल है। इसके अतिरिक्त 'हम' और 'वे' की मानसिकता का निर्माण भी इसकी महत्वपूर्ण विशेषता है। ऐसी प्रवृत्ति में ऐतिहासिक पात्रों का मूल्यांकन आधुनिक सामुदायिक पहचान के आधार पर किया जाता है, जबकि ऐतिहासिक व्यक्तियों की अपनी परिस्थितियाँ और राजनीतिक हित अलग हो सकते थे। साम्प्रदायिक दृष्टिकोण स्थानीय और क्षेत्रीय विविधताओं की उपेक्षा भी कर सकता है। उदाहरण के लिए, विभिन्न धार्मिक समुदायों के बीच व्यापार, कला, स्थापत्य, भाषा, संगीत, साहित्य और प्रशासन में हुए पारस्परिक प्रभावों को नजरअंदाज करने से भारतीय संस्कृति के विकास की वास्तविक बहुलतापूर्ण प्रकृति अस्पष्ट हो जाती है।

IX. भारतीय समाज पर प्रभाव

साम्प्रदायिक इतिहास-लेखन का प्रभाव केवल अकादमिक क्षेत्र तक सीमित नहीं रहता। यह सामाजिक पहचान, सामुदायिक संबंधों और राजनीतिक व्यवहार को प्रभावित कर सकता है। जब इतिहास की घटनाओं को लगातार 'एक समुदाय बनाम दूसरे समुदाय' के संघर्ष के रूप में प्रस्तुत किया जाता है, तो वर्तमान पीढ़ियों में अतीत के प्रति भावनात्मक और पक्षपातपूर्ण दृष्टिकोण विकसित होने की संभावना बढ़ जाती है। इससे सामाजिक अविश्वास, पूर्वाग्रह और सामुदायिक दूरी को बल मिल सकता है। विशेष रूप से विद्यालयी शिक्षा में यदि ऐतिहासिक घटनाओं का एकपक्षीय प्रस्तुतीकरण किया जाता है, तो विद्यार्थियों के इतिहास-बोध पर दीर्घकालीन प्रभाव पड़ सकता है। दूसरी ओर, संतुलित इतिहास-लेखन विभिन्न समुदायों के साझा अनुभवों और पारस्परिक निर्भरता को सामने लाकर सामाजिक एकता को मजबूत कर सकता है।

X. इतिहास-शिक्षा पर प्रभाव

विद्यालय और उच्च शिक्षा संस्थान ऐतिहासिक चेतना के निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। पाठ्यपुस्तकों में प्रस्तुत इतिहास विद्यार्थियों के लिए अतीत को समझने का प्रमुख माध्यम होता है। इसलिए साम्प्रदायिक दृष्टिकोण से तैयार सामग्री विद्यार्थियों में किसी समुदाय के प्रति रूढ़ छवियाँ विकसित कर सकती है। इसके विपरीत, स्रोत-आधारित और आलोचनात्मक इतिहास-शिक्षण विद्यार्थियों को यह समझने में सहायता करता है कि इतिहास की व्याख्या विभिन्न स्रोतों और दृष्टिकोणों के आधार पर की जाती है। इतिहास-शिक्षण में विभिन्न समुदायों के साझा सांस्कृतिक योगदान, सामाजिक संपर्क, मिश्रित परंपराओं और क्षेत्रीय विविधताओं को

IJARSCT

International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology

International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal

ISSN: 2581-9429 Volume 6, Issue 5, July 2026 Impact Factor: 8.2

स्थान देना आवश्यक है। इससे विद्यार्थी अतीत को वर्तमान राजनीतिक पूर्वाग्रहों के बजाय ऐतिहासिक संदर्भों में समझने में सक्षम होते हैं।

XI. आधुनिक इतिहास-लेखन की वैकल्पिक प्रवृत्तियाँ

साम्प्रदायिक इतिहास-लेखन के समानांतर भारतीय इतिहास में अनेक ऐसी इतिहासलेखन परंपराएँ विकसित हुईं जिन्होंने धार्मिक पहचान से परे इतिहास की व्याख्या का प्रयास किया। मार्क्सवादी इतिहासकारों ने आर्थिक संरचनाओं, वर्ग संबंधों और उत्पादन प्रणालियों पर बल दिया। सामाजिक इतिहास ने किसानों, श्रमिकों, महिलाओं और वंचित समूहों को अध्ययन के केंद्र में लाया। उपaltern और जन-इतिहास की प्रवृत्तियों ने अभिजात राजनीतिक इतिहास से बाहर सामान्य लोगों की भूमिका को महत्व दिया। सांस्कृतिक इतिहास ने भाषा, लोकपरंपराओं, कला, साहित्य और दैनिक जीवन के माध्यम से सामाजिक परिवर्तन को समझने का प्रयास किया। इन दृष्टिकोणों का महत्व इसलिए है क्योंकि वे इतिहास को बहुस्तरीय प्रक्रिया के रूप में देखते हैं और धार्मिक पहचान को इतिहास की एकमात्र व्याख्यात्मक श्रेणी बनाने से बचते हैं।

XII. निष्कर्ष

भारतीय ऐतिहासिक लेखन में साम्प्रदायिक प्रवृत्तियों का उद्भव और विकास एक जटिल ऐतिहासिक प्रक्रिया है, जिसे औपनिवेशिक ज्ञान-व्यवस्था, सामाजिक-राजनीतिक प्रतिस्पर्धा, राष्ट्रवादी प्रतिक्रियाओं और आधुनिक राजनीति के व्यापक संदर्भ में समझना आवश्यक है। साम्प्रदायिक इतिहास-लेखन की सबसे बड़ी समस्या यह है कि वह भारतीय अतीत की बहुलता और जटिलता को धार्मिक द्वंद्व की सरल संरचना में सीमित कर देता है। भारतीय इतिहास में संघर्षों के साथ-साथ सहयोग, सांस्कृतिक आदान-प्रदान, सह-अस्तित्व और साझा सामाजिक जीवन की भी लंबी परंपरा रही है। इसलिए इतिहास के अध्ययन में किसी भी समुदाय के प्रति पूर्वनिर्धारित प्रशंसा या नकारात्मकता के बजाय प्रमाण, संदर्भ और आलोचनात्मक विवेक को प्राथमिकता दी जानी चाहिए। एक संतुलित इतिहास-लेखन न तो अतीत के संघर्षों को छिपाता है और न ही उन्हें साम्प्रदायिक वैमनस्य को बढ़ाने के लिए उपयोग करता है। इसके बजाय वह ऐतिहासिक घटनाओं को उनके समय, परिस्थितियों और बहुस्तरीय सामाजिक संदर्भों में समझने का प्रयास करता है। इस प्रकार भारतीय इतिहास-लेखन को अधिक वैज्ञानिक, समावेशी और बहुलतावादी बनाना न केवल अकादमिक आवश्यकता है, बल्कि लोकतांत्रिक समाज में ऐतिहासिक चेतना के स्वस्थ विकास के लिए भी अत्यंत आवश्यक है।

संदर्भ

1. बताब्याल, आर. (2016). धर्मनिरपेक्ष ढांचे की खोज: गणतंत्र के पहले दशक में भारत में इतिहास लेखन। स्टडीज़ इन पीपल्स हिस्ट्री, 3(2), 216–228.
2. जलाल, ए. (1996). धर्मनिरपेक्षतावादी, उपेक्षित वर्ग और 'सांप्रदायिकता' का कलंक: विभाजन के इतिहास लेखन पर पुनर्विचार। इंडियन इकोनॉमिक एंड सोशल हिस्ट्री रिव्यू, 33(1), 87–108.
3. महाजन, एस. (2018). हिंदुत्व एजेंडा और इतिहास लेखन: राष्ट्र की कल्पनाएं। रेविस्टा कैनारिया डी एस्टुडियोस इंग्लेसेस, 76, 211–221.
4. सेशन, आर. (2007). भारत में राष्ट्र का लेखन: सांप्रदायिकता और इतिहास लेखन। राइटिंग द नेशन (पृष्ठ 155–178) में। पालग्रेव मैकमिलन।
5. पांडे, जी. (2006). भारतीय अतीत का औपनिवेशिक निर्माण। द कंस्ट्रक्शन ऑफ कम्युनलिज्म इन कॉलोनियल नॉर्थ इंडिया (पृष्ठ 23–65) में। ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।
6. मुखर्जी, एस. (2011). 1947 से भारतीय इतिहास लेखन। ए. श्नाइडर और डी. वूल्फ (संपादक), द ऑक्सफोर्ड हिस्ट्री ऑफ हिस्टोरिकल राइटिंग: वॉल्यूम 5: हिस्टोरिकल राइटिंग सिंस 1945 (पृष्ठ 515–538) में। ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।
7. थापर, आर., मुखिया, एच., और चंद्रा, बी. (1969). सांप्रदायिकता और भारतीय इतिहास का लेखन। पीपल्स पब्लिशिंग हाउस।

ISSN: 2581-9429
Volume 6, Issue 5, July 2026
Impact Factor: 8.2

8. थापर, आर. (2014). अतीत वर्तमान के रूप में: इतिहास के माध्यम से समकालीन पहचान का निर्माण। एलेफ बुक कंपनी।
9. हबीब, आई. (1997). इतिहास और व्याख्या: भारत में सांप्रदायिकता और इतिहास लेखन की समस्याएं। सोशल साइंटिस्ट, 25(1/2), 3–11.